International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

हिन्दी दलित कविता में व्यक्त विद्रोह

डॉ0 **संतोष रानी**,
Junior Lecturer, Govt. Girls Sr. Sec. School, Madina, Rohtak

हिन्दी की दलित कविता दलित समाज की संघर्ष और वेदना की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। यह दलित आन्दोलन से प्रेरित दलित वर्ग की अस्मिता की खोज के लिए प्रतिबद्ध कविता है। यह ऐसी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व धार्मिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह की कविता है जिसमें हजारों सालों से मनुष्य को मनुष्य जैसा जीवन जीने से वंचित किया गया और उसको अन्याय, अपमान, अत्याचार, बेबसी, लाचारी, गरीबी और गुलामी भरा जीवन जीने के लिए बाध्य किया गया। अपने कविता संग्रह 'मूक माटी की मुखरता' की भूमिका में डॉ0 पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी लिखते हैं– "दलित कविता कवियों के सामूहिक चीत्कार, गूंगों की आवाज और आक्रोश की अभिव्यक्ति है।"[1] दलित कविता इस विषमतामूलक समाज व्यवस्था, जाति व्यवस्था व वर्ण व्यवस्था से विद्रोह करती है।

दलित कविता में आक्रोश व विद्रोह की अभिव्यक्ति सशक्त रूप में हुई है। इस सन्दर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते है– "दलित कविता में आक्रोशित स्वर में जो आंतरिक भावबोध है, उसका सम्बंध ऐतिहासिक संदर्भों में विद्यमान है। दलित कवि एक मनुष्य की तरह जीना चाहता है क्योंकि एक मनुष्य की तरह सम्मान से जीने का उसे अधिकार मिलना चाहिये। जो उससे वर्ण व्यवस्था के सामाजिक प्रतिबंधों से छीना है। इसलिए दलित कविता में वर्णव्यवस्था विरोध व सामाजिक विषमता के प्रति गहरा विक्षोभ दिखाई देता है।"[2]

दलित समाज ने अब तक बेबसी, घृणा, अपमान व अत्याचारपूर्ण वातावरण में जीवन बिताया है। किसी एक जाति में जन्म लेने मात्रा से उसे जीवन की तमाम सुख–सुविधाओं और समस्त मानवाधिकारों से वंचित कर दिया जाता है तथा उसे कदम कदम पर अपमानित व शोषित होना पड़ता है। ऐसे परिवेश में जब उसके हाथ में कलम आयेगी तो उसकी वाणी या अभिव्यक्ति में आक्रोश होना स्वाभाविक माना जा सकता है। कवि व कथाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं–"दलित कविता में आक्रोश उस भोगी हुई वेदना, अपमान और यातना के विरोध में है। जिसे दलित समाज हजारों साल की संघर्ष यात्रा में वहन करता रहा है। दलित कविता उसी अनुभव जगत की अभिव्यक्ति है।"[3]

हिन्दी दलित कविता में अभिव्यक्त आक्रोश व विद्रोह किसी व्यक्ति विशेष अथवा कवि या लेखक का नहीं है बल्कि सम्पूर्ण समाज की अभिव्यक्ति है। इस संदर्भ में विमल थोरात लिखती है– "दलित कविता में अभिव्यक्त संघर्ष एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से नहीं बल्कि एक समाज का दूसरे समाज से है। इसलिए दलित कविता घोषणा करती है कि इस कविता का नायक व्यक्ति नहीं, समाज है।"[4] व्यक्ति दलित कविता मे व्यक्त विद्रोह की सार्थकता को स्वीकार करती हुई वे आगे कहती है– "दलित कविता में विद्रोह की अभिव्यक्ति ही उसकी सोद्देश्यता एवम् जीवंतता की प्रतीक है।"[5] अतः हिन्दी की दलित कविता सच्चाइयों, विसंगतियों, विषमताओं और विद्रूपताओं की सहज एवम् स्वाभाविक अभिव्यक्ति की कविता है। जिसमें भारतीय वर्ण व्यवस्था, जातिभेद, छुआछूत, अन्याय, अत्याचार, व शोषण के विरूद्ध विद्रोह करती हुई दलित कविता सामाजिक न्याय व समानता के लिए संघर्षरत है।

दलित कवियों ने सामाजिक विषमता व वर्ण व्यवस्था का विरोध किया है क्योंकि यह व्यवस्था समस्त समाज को दो भागों में विभाजित करती है। जिसमें दलित वर्ग पिसता रहता है। इसी व्यवस्था को ललकारते हुए जयप्रकाश कर्दम अपनी कविता 'धर्मग्रन्थों को आग लगानी होगी' में लिखते हैं– "समाज को प्रगतिशील बनाना है/जाति के जहर को मिटाना है/तो इन तथाकथित धर्मग्रंथो को/आग लगानी होगी/नकारना होगा/वर्णित उस ईश्वर को/जो कर्मानुसार/फल देता है/और मोक्ष भी/वर्णों के अनुसार/जगानी होगी शुद्ध प्रज्ञा/ध्वस्त करने होंगे/विषमताओं के संरक्षण।"[6]

दलित कवियों का संघर्ष शासन–प्रशासन, धर्म, नीति या आध्यात्मिक ज्ञान को पाने के लिए नहीं है बल्कि वह तो अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सवर्ण समाज से संघर्षरत है। कवि 'बेमानी है आजादी' कविता में लिखते हैं– "बेमानी है उसके लिए /आजादी और लोकतन्त्र की बातें/व्यर्थ है संसद और संविधान/नही चाहिए उसे/नीति और धर्म की शिक्षा/नहीं चाहिए अध्यात्म का ज्ञान/उसे चाहिए रोटी और सम्मान।"[7]

यह दलित समाज का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि जहाँ एक तरफ दुनिया में वैश्वीकरण व उदारीकरण की लहर दौड़ रही है। वहीं दलित समाज आज भी अपनी मौलिक आवश्यकताओं के लिए लड़ रहा है।

दलित साहित्यकारों का मानना है कि अधिकार छीनने से मिलते हैं। गिड़गिड़ाने या हाथ जोड़ने से नहीं। इसी सोच को आगे बढ़ाते हुए दलित कवियों ने दलित समाज को संघर्ष व चेतना के प्रति सचेत किया है। कवि कुसुम वियोगी 'सामंती' कविता के माध्यम से ऐसा ही कुछ कहना चाहते हैं– "मिमियाने, गिड़गिड़ाने की भाषा/क्रूरता नहीं जानती/गिड़गिड़ाने से/हो गया है कितना बौना/सामन्तियों के हाथों/बनकर रह गया है खिलौना/अच्छा हो उठ/बोल अधिकार की भाषा/तब स्वयं समझ जाएगा/परिवर्तन की भाषा?"[8]

दलित कविता समाज को केन्द्र में रखकर चलती है। उसका अपना सामाजिक दर्शन है जो समाज में व्याप्त रूढ़ परम्पराओं का खण्डन करती है। वर्ण व्यवस्था व अस्पृश्यता का तीव्र विरोध भी इसमें निहित है और यह एक समतावादी समाज की कल्पना को साथ लेकर चलती है। "अब/तुम्हारी व्यवस्था के पिंजरे/तुम्हें ही मुबारक/अब तो/मैं, बुनकर ही रहूँगा/सामाजिक पुनः संरचना की चादर/समता के धागों से।"[9]

किसी जाति विशेष में जन्म लेने मात्र से ही व्यक्ति कितना पवित्र व अपवित्र हो जाता है। यह दलित कविता के लिए अहम् सवाल बनकर उभरा है। वर्ण व्यवस्था के विधान पर चोट करते हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते हैं–

"तुमने कहा
ब्रह्मा के पाँव से जन्मे शूद्र
और सिर से ब्राह्मण
उन्होंने पलट कर नहीं पूछा–
ब्रह्मा कहाँ से जन्मा?"[10]

कवि इसी व्यवस्था से पुनः सवाल करते हुए कहते हैं कि इस व्यवस्था को दलित कब तक ढ़ोता रहेगा–

"वह दिन कब आयेगा
जब बामनी नहीं जनेगी बामन
चमारी नहीं जनेगी चमारी
भंगिन भी नहीं जनेगी भंगी।"[11]

ओमप्रकाश वाल्मीकि दलितों के साथ धर्म के नाम पर किये जाने वाले शोषण पर उंगली उठाते हुए कहते है –

"यदि तुम्हें
सरेआम बेइज्जत किया जाये
छीन ली जाये सम्पति, तुम्हारी
धर्म के नाम पर।"[12]

ब्राह्मणवादी व मनुवादी व्यवस्था ने धर्म को किस तरह अपने हित में प्रयोग किया है। इसका कच्चा चिटठा दलित कविता में बखूबी उभरकर आया है। कुसुम वियोगी 'राष्ट्रीयता के नाम पर' कविता में कहते हैं–

"जनसंख्या का
मात्र 3 प्रतिशत है! रे
जो काबिज है, 'सत्ता और सम्पत्ति पर'
खूब छला जनगण को
राम के नाम पर,
मंदिर निर्माण को !
चल पड़ा,
हाथ में कमंडल लिए ! एक अदद आदमी,
होकर सवार राम–रथ पर !
बन बैठा भारतीय संस्कृति का पोषक
राष्ट्रीयता के नाम पर।"[13]

दलित कविता ने समाज में धर्म के नाम पर फैले पाखण्ड, पत्थर–पूजा और कर्मकाण्डों की धज्जियाँ उड़ायी हैं। जिसमें केवल दलित वर्ग ही पिसता है। कवि सूरजपाल चौहान 'कितने महान हो तुम' कविता में लिखते हैं–

"सदा से रहा है
कथनी और करनी में अन्तर
तुम्हारे पिटारे में है
केवल –
ढोंग, पाखण्ड, टोना–टोटका
और मन्त्र।"[14]

इन धार्मिक आडम्बरों से छुटकारा दिलाने के लिए दलित कवि हमेशा सचेत रहा है। "स्वामी अछूतानंद ने सन् 1925 में 'मनुस्मृति से जलन' नामक कविता लिखकर वर्णव्यवस्था के खतरों से दलितों को आगाह किया था और स्वामी अछूतानंद के सन्देश को व्यावहारिक रूप देते हुए डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर ने दलितों पर उत्पीड़न को महिमा मंडित करने वाले ग्रन्थ 'मनुस्मृति' को सन् 1927 में जलाया था।"[15] क्योंकि इन्हीं धार्मिक ग्रन्थों के माध्यम से दलितों का शोषण किया जाता रहा है और ये धार्मिक ग्रंथ हिन्दू संस्कृति का अहम् हिस्सा रहे हैं। दलित कवि जयप्रकाश कर्दम इन्ही धर्म ग्रन्थों को दलित शोषण का हथियार मानते हुए 'धर्म ग्रंथों को आग लगानी होगी' कविता में लिखते है–

"जो कहते हैं,
वर्ण–व्यवस्था
अप्रसांगिक हो चुकी है।
जब तक स्मृतियां रहेंगी

रामायण, गीता और वेद रहेंगे
तब तक वर्ण–शुचिता रहेगी
अस्पृश्यता रहेगी, जातिवाद रहेगा
समाज में विघटन
और विद्वेष रहेगा।"[16]

अब तक सवर्ण समाज ने दलित समाज को जो ऊँच–नीच, जाति–पाति, भेदभाव एवं असमानता का कड़वा जहर पीने के लिए मजबूर किया है। दलित समाज के लिए अब वह जहर पीना मुश्किल हो गया है। क्योंकि अब उसमें चेतना का संचार हो गया है और अब वह पुरानी गली–सड़ी परम्पराओं को उखाड़ फेंकने के लिए उद्धत है– "अब/टूट चुका है/हमारी आस्था का धैर्य/हम, उखाड़कर ही रहेंगे/तुम्हारी पुरातन व्यवस्था की/खोखली जड़ें।"[17]

दलित समाज अब शिक्षित होकर अन्याय व अत्याचार का प्रतिकार करना सीख गया हैं। वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गया है। दलित कविता ने इस संघर्ष व चेतना को भी अपनी कलम द्वारा समाज के समक्ष रखा है। कुसुम वियोगी 'प्रतिशोध' कविता में लिखते हैं– "अब हम आजादी की सांस लेना सीख रहे हैं/युग बदला है/परिभाषाएँ बदली हैं/खून बदला है, जुनून बदला है/अब उनकी बंदूकें/हमारी छातियों पर नहीं तनेंगी/वरन् हम ही फटेंगे, बनके 'बारूद'/जब तुम्हारे घर–बस्तियों व आंगन में/लेने को प्रतिशोध/सोचो ! तब तुम्हें कैसा लगेगा?"[18]

ऐसे ही प्रतिकार की आवाज जयप्रकाश कर्दम की कविता 'अम्बेडकर की संतान' में सुनाई पड़ती है–

"अब और नहीं सहेंगी
शोषण और अत्याचार
नहीं रहेगी मौन
कृष्णा के आंसू
हरखू की बेबसी
हरिया के संताप का
लेंगी हिसाब

तोड़कर अन्याय ओर शोषण की
जंजीरों को
रचेंगी नया इतिहास।"[19]

ओमप्रकाश वाल्मीकि भी इस असमानता पर आधारित व्यवस्था के खिलाफ है और वे सवर्ण समाज के प्रति विरोध प्रकट करते हुए 'ज्वालामुखी' कविता में लिखते हैं– "सदियों से पीड़ित, दलित/मेरा हृदय बन गया है–ज्वालामुखी/फट पड़ने को लालायित/भीतर ही भीतर/मुझे हिला रहा है।..../बहुत हो चुका/शोषण,/प्रताड़ना/और उपेक्षा/बस, अब मेरा ज्वाला मुखी फट पड़ेगा।"[20] अतः दलित कवियों ने दलित विद्रोह को पूर्ण बेबाकी के साथ अपनी कविताओं में व्यक्त किया है।

शोषण और अन्याय की चक्की में पिसते–पिसते दलित समाज अब थक चुका है। उसके धैर्य की सारी सीमाएँ टूट चुकी है। कुछ एसी व्यथा कवि अभिव्यक्त करते हुए कहते है– "तमाम विरोधों और दवाबों के बावजूद/जाति के जंगल का यह निरीह जीव/अपनी मुक्ति के लिए अड़ा है/अपनी अस्मिता व अस्तित्व के लिए लड़ा है/और आज/तमाम हौसलों के साथ/हाथों में खंजर लिए वह/दमन की दहलीज पर खड़ा है/और ललकार रहा है चीखकर/बाहर निकल हरामजादे/तेरी ऐसी–तैसी.. ... ।"[21]

दलित कविता में दलित समाज का सवर्ण समाज के प्रति जो नकार व विद्रोह प्रदर्शित हुआ है। वह उसके सदियों से दबे शोषण व अत्याचार की अभिव्यक्ति है। वह सवर्ण समाज को तहस नहस करके अपने अधिकारों को प्राप्त नहीं करना चाहता बल्कि मनुष्य–मनुष्य के मध्य समानता व न्याय की स्थापना करना चाहता है। जिससे समाज में मानवीय मूल्यों की स्थापना हो सके और समाज को समानता की कसौटी पर कसा जा सके। जयप्रकाश कर्दम आरक्षण कविता में लिखते हैं– "अब हर क्षेत्र में होगी/समान रूप से हिस्सेदारी/शासन–प्रशासन से लेकर/मैला ढोने, जूती गांठने/और झाड़ू लगाने तक के काम में भी/बांटनी होगी समानता।"[22]

दलित कवि डॉ0 एन0 सिंह भी इसी आशावादी दृष्टिकोण को अपनाते है तथा दलितों में चेतना व विद्रोह का स्वर बुलंद करते हुए सवर्ण समाज को चेतावनी देते हैं। वे अपनी कविता 'अभी वक्त है' में लिखते हैं– "आज नहीं तो कल जरूर/ये भूखी मानवता जागेगी/अपनी सारी मेहनत का/तुमसे जरूर हिसाब मांगेगी।"[23]

दलित साहित्य ने जहाँ मनुवादी व ब्राह्मणवादी व्यवस्था के खिलाफ मोर्चा खोला है। वही दलित समाज को अपनी कमियों को जाँचने–परखने के लिए आगाहा किया है। दलित कविता ने भी इस रास्ते को अपनाते हुए दलित समाज को अपने अंदर झांकने के लिए चेताया है। इसी संदर्भ में सूरजपाल चौहान 'सोच बदल' कविता में दलित समाज को ऐसा ही संदेश देते हैं– "आखिर क्यों व्याप्त है/तुम्हारी सोच में असफलता का भूत?/जूझने की हिम्मत पैदा कर/आशा और विश्वास के बीज बो/आगे बढ़/और/अपनी सोच बदल।"[24] इस प्रकार दलित कवियों ने दलित समाज को अपनी योग्यता सिद्ध करने की बात को बुलंद किया है जिसमें वे आरक्षण रूपी बेसाखी का सहारा त्यागकर हर क्षेत्र में आगे बढ़े और सवर्ण समाज के समक्ष एक चुनौती के रूप में उपस्थित हो।

अतः हिन्दी की दलित कविता ने दलित समाज से सम्बधित हर समस्या को अपनी कविता की विष्यवस्तु बनाया है जिसमें वह सवर्ण समाज के अन्याय, अपमान, अत्याचार व शोषण को अभिव्यक्त करती है। वही वह दलित समाज को लोकतान्त्रिक मूल्यों की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध भी करती है। इस दिशा में दलित कवियों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हिन्दी दलित कविता में अभिव्यक्त सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वर्ण व जाति सम्बंधी जीवन मूल्यों को दलित कवियों ने अपने काव्य–सर्जन का आधार बनाया है। जो समाज सदियों से अपमान, अत्याचार, गुलामी, छुआछूत, गरीबी, लाचारी व बेबसी भरा जीवन व्यतीत करता आया है दलित कवियों ने उनकी वाणी को संवेदनात्मक रूप में उजागर किया है तथा साथ–साथ सदियों का शोषण व अपमान दलित कवियों की वाणी में विद्रोह के रूप में भी प्रकट हुआ है। दलित कविता का यह विद्रोह हिंसात्मक न होकर समानता व भाइचारे पर आधारित रहा है जिसमे डॉ0 भीमराव अम्बडेकर व गौतम बुद्ध के वैचारिक दर्शन को आधार बनाया गया है। इस संदर्भ में रजत रानी 'मीनू' लिखती है –

"दलित कविता बदत्तर जीवन स्थितियों के खिलाफ बेहतर जीवन परिस्थितियों के लिए यथास्थिति से विद्रोह की कविता है। यह विद्रोह मार्क्स की रक्त क्रांति जैसा हिंसात्मक केवल राजनीतिक स्तर पर घटित होने वाला विद्रोह नहीं है

अपितु बुद्ध, अम्बडेकर की रक्तरहित सम्यक क्रांति का प्रेरक मन्त्र है जो सामाजिक सांस्कृतिक स्तरों पर घटित होने वाले सन्तुलित परिवर्तन का आधार है।"[25]

वर्तमान में दलित साहित्य व आन्दोलन ने समाज में भले ही अलग मुकाम हासिल किया हो लेकिन दलित समाज वर्तमान में भी तमाम मानवाधिकारों से वंचित है। आजादी की स्वर्ण जयंती व मानवाधिकारों की घोषणा के 70 वर्ष बीत जाने पर भी दलितों की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हो पाया है। अतः जरूरत है समाज में लोकतान्त्रिक मूल्यों को व्यवहार में लागू करने की जिससे समाज में समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्ता व न्याय की स्थापना हो सकें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जयप्रकाश कर्दम (सं0) : दलित साहित्य (वार्षिकी) 2004ए नई दिल्ली, अकादमिक प्रतिभा, पृ0 60
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि : सदियों का संताप (कविता संग्रह), भूमिका से, दिल्ली, गौतम बुक सैन्टर, द्वि0 सं0 2008, पृ0 8
3. यथावत्, पृ0 7
4. विमल थोरात : दलित साहित्य का स्त्रीवादी स्वर, नई दिल्ली, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीबयूटर्स (प्रा0) लि0, सं0 2008, पृ0 57
5. यथावत्, पृ0 57
6. जयप्रकाश कर्दम : गूंगा नहीं था मैं (कविता संग्रह), धर्मग्रंथों को आग लगानी होगी, दिल्ली, सागर प्रकाशन, सं0 2006, पृ0 75
7. यथावत्, बेईमानी है आजादी, पृ0 28
8. कुसुम वियोगी : टुकड़े–टुकड़े दंश (कविता संग्रह), सामंती, पृ0 87
9. यथावत्, पिजंरे, पृ0 54
10. ओमप्रकाश वाल्मीकि : बस्स ! बहुत हो चुका (कविता संग्रह), दिल्ली, गौतम बुक सैन्टर, पृ0 99
11. यथावत्, वह दिन कब आयेगा, पृ0 103
12. ओमप्रकाश वाल्मीकि : सदियों का संताप (कविता–संग्रह), तब तुम क्या करोगे? पृ0 51
13. वियोगी कुसुम : व्यवस्था के विषधर (कविता संग्रह), राष्ट्रीयता के नाम पर, दिल्ली, अपना प्रकाशन, सं0 1995, पृ0 31
14. सूरजपाल चौहान : क्यों विश्वास करूँ (कविता संग्रह), कितने महान हो तुम, पृ0 60
15. जयप्रकाश कर्दम : दलित साहित्य (वार्षिकी) 2003, पृ0 94
16. जयप्रकाश कर्दम : गूंगा नहीं था मैं (कविता–संग्रह), धर्मग्रन्थों को आग लगानी होगी, पृ0 74
17. वियोगी कुसुम : टुकड़े–टुकड़े दंश (कविता संग्रह), पिजंरे, पृ0 21
18. यथावत्, प्रतिशोध, पृ0 90
19. जयप्रकाश कर्दम : गूंगा नहीं था मैं (कविता संग्रह), अम्बेडकर की संतान, पृ0 57
20. ओमप्रकाश वाल्मीकि : सदियों का संताप (कविता संग्रह), ज्वालामुखी, पृ0 17–18
21. जयप्रकाश कर्दम : गूंगा नहीं था मै (कविता संग्रह), दमन की दहलीज पर, पृ0 39
22. यथावत्, आरक्षण, पृ0 18
23. एन0 सिंह : सतह से उठते हुए (कविता संग्रह), अभी वक्त है, दिल्ली, राज पब्लिशिंग हाऊस, सं01991, पृ0 43
24. सूरजपाल चौहानः क्यों विश्वास करूँ (कविता संग्रह), सोच बदल, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, सं0 2004, पृ0 42
25. ओमप्रकाश वाल्मीकि : दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, सं0 2009, पृ0 25